॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

अथर्ववेदीय

देव्युपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

देवीकी ब्रह्मस्वरूपता; देवताओंद्वारा देवीकी स्तुति; देवी-महिमा और इसके पाठका फल

सभी देवता देवीके समीप जाकर प्रार्थना करने लगे—'महादेवि! तुम कौन हो?' ॥ १ ॥

उन्होंने कहा—'मैं ब्रह्मस्वरूपा हूँ। मुझसे प्रकृति-पुरुषात्मक कारणरूप और कार्यरूप जगत् उत्पन्न हुआ है। मैं आनन्द और अनानन्दरूपा हूँ। मैं विज्ञान और अविज्ञानरूपा हूँ। अवश्य जाननेयोग्य ब्रह्म और अब्रह्म भी मैं ही हूँ। पञ्चीकृत और अपञ्चीकृत महाभूत भी मैं ही हूँ। यह सारा दृश्य जगत् मैं ही हूँ। वेद और अवेद मैं हूँ। विद्या और अविद्या भी मैं, अजा और अनजा (प्रकृति और उससे भिन्न) भी मैं हूँ; नीचे-ऊपर, अगल-बगल भी मैं ही हूँ। मैं रुद्रों और वसुओंके रूपमें सञ्चार करती हूँ। मैं आदित्यों और विश्वेदेवोंके रूपोंमें फिरा करती हूँ। मैं मित्र और वरुण दोनोंका, इन्द्र एवं अग्निका और दोनों अश्विनीकुमारोंका भरण-पोषण करती हूँ। मैं सोम, त्वष्टा, पूषा और भगको धारण करती हूँ। त्रैलोक्यको आक्रान्त करनेके लिये विस्तीर्ण पादक्षेप करनेवाले विष्णु, ब्रह्मदेव और प्रजापतिको मैं ही धारण करती हूँ। देवोंको हवि पहुँचानेवाले और सावधानीसे सोमरस निकालनेवाले यजमानके लिये हविर्द्रव्योंसे युक्त धनको धारण करती हूँ। मैं सम्पूर्ण जगत्की ईश्वरी, उपासकोंको धन देनेवाली, ज्ञानवती और यज्ञार्होंमें (यजन करनेयोग्य देवोंमें) मुख्य हूँ। मैं ही इस जगत्के पितारूप आकाशको सर्वाधिष्ठानस्वरूप परमात्माके ऊपर उत्पन्न करती हूँ। मेरा स्थान आत्मस्वरूपको धारण करनेवाली बुद्धिवृत्तिमें है। जो इस प्रकार जानता है, वह दैवी-सम्पत्ति लाभ करता है' ॥ २—७ ॥

तब उन देवोंने कहा—'देवीको नमस्कार है। बड़े-बड़ोंको अपने-अपने कर्तव्यमें प्रवृत्त करनेवाली कल्याणकर्त्री महादेवीको सदा नमस्कार है। गुण-साम्यावस्थारूपिणी मङ्गलमयी देवीको नमस्कार है। नियमयुक्त होकर हम उन्हें प्रणाम करते हैं। उन अग्निके-से वर्णवाली, ज्ञानसे जगमगानेवाली, दीप्तिमती, कर्मफलप्राप्तिके हेतु सेवन की जानेवाली दुर्गादेवीकी हम शरणमें हैं। असुरोंका नाश करनेवाली देवि! तुम्हें नमस्कार है। प्राणरूप देवोंने जिस प्रकाशमान वैखरी वाणीको उत्पन्न किया, उसको अनेक प्रकारके प्राणी बोलते हैं। वे कामधेनुतुल्य आनन्ददायक और अन्न तथा बल देनेवाली वाग्रूपिणी भगवती उत्तम स्तुतिसे संतुष्ट होकर हमारे समीप आयें। कालका भी नाश करनेवाली, वेदोंद्वारा स्तुत विष्णुशक्ति, स्कन्दमाता (शिवशक्ति), सरस्वती (ब्रह्मशक्ति), देवमाता अदिति

और दक्षकन्या (सती), पापनाशिनी एवं कल्याणकारिणी भगवतीको हम प्रणाम करते हैं। हम महालक्ष्मीको जानते हैं और उन सर्वशक्तिरूपिणीका ही ध्यान करते हैं। वे देवी हमें उस विषयमें (ज्ञान-ध्यानमें) प्रवृत्त करें। हे दक्ष! आपकी जो कन्या अदिति हैं, वे प्रसूता हुईं और उनके स्तुत्यर्ह और मृत्युरहित देवता उत्पन्न हुए। काम (क), योनि (ए), कमला (ई), वज्रपाणि—इन्द्र (ल), गुहा (ह्रीं)। ह, स—वर्ण, मातरिश्वा—वायु (क), अभ्र (ह), इन्द्र (ल), पुनः गुहा (ह्रीं)। स, क, ल—वर्ण, और माया (ह्रीं), यह सर्वात्मिका जगन्माताकी मूल विद्या है और यह ब्रह्मरूपिणी है। (शिवशक्त्यभेदरूपा, ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मिका, सरस्वती-लक्ष्मी-गौरीरूपा, अशुद्ध-मिश्र-शुद्धोपासनात्मिका, समरसीभूत शिवशक्त्यात्मक ब्रह्मस्वरूपका निर्विकल्प ज्ञान देनेवाली, सर्वतत्त्वात्मिका महात्रिपुरसुन्दरी—यही इस मन्त्रका भावार्थ है। यह मन्त्र सब मन्त्रोंका मुकुटमणि है और मन्त्रशास्त्रमें पञ्चदशीकादि श्रीविद्याके नामसे प्रसिद्ध है। इसके छः प्रकारके अर्थ अर्थात् भावार्थ, वाच्यार्थ, सम्प्रदायार्थ, कौलिकार्थ, रहस्यार्थ और तत्त्वार्थ 'नित्या-षोडशिकार्णव' ग्रन्थमें बताये गये हैं। इसी प्रकार 'वरिवस्यारहस्य' आदि ग्रन्थोंमें इसके और भी अनेक अर्थ दरसाये हैं। श्रुतिमें भी ये मन्त्र इस प्रकारसे अर्थात् क्वचित् स्वरूपोच्चार, क्वचित् लक्षणा और लक्षित लक्षणासे और कहीं वर्णके पृथक्-पृथक् अवयव दरसाकर जान-बूझकर विशृङ्खलरूपसे कहे गये हैं। इससे यह मालूम होगा कि ये मन्त्र कितने गोपनीय और महत्त्वपूर्ण हैं।) ये परमात्माकी शक्ति हैं। ये विश्वमोहिनी हैं। पाश, अङ्कुश, धनुष और बाण धारण करनेवाली हैं। ये 'श्रीमहाविद्या' हैं। जो इस प्रकार जानता है, वह शोकको पार कर जाता है। भगवती! तुम्हें नमस्कार है। माता! सब प्रकारसे हमारी रक्षा करो॥ ८—१६॥

(मन्त्रद्रष्टा ऋषि कहते हैं—) वही ये अष्ट वसु हैं; वही ये एकादश रुद्र हैं; वही ये द्वादश आदित्य हैं; वही ये सोमपान करनेवाले और न करनेवाले विश्वेदेव हैं; वही ये यातुधान (एक प्रकारके राक्षस), असुर, राक्षस, पिशाच, यक्ष, और सिद्ध हैं; वही ये सत्त्व-रज-तम हैं; वही ये ब्रह्म-विष्णु-रुद्ररूपिणी हैं; वही ये प्रजापति-इन्द्र-मनु हैं; वही ये ग्रह, नक्षत्र और तारे हैं; वही कला-काष्ठादि कालरूपिणी हैं; पापका नाश करनेवाली, भोग-मोक्ष देनेवाली, अन्तरहित, विजयाधिष्ठात्री, निर्दोष, शरण लेनेयोग्य, कल्याणदात्री और मङ्गलरूपिणी उन देवीको हम सदा प्रणाम करते हैं। वियत्—आकाश (ह) तथा 'ई' कारसे युक्त, वीतिहोत्र—अग्नि (र) सहित, अर्धचन्द्र (ँ)-से अलंकृत जो देवीका बीज (ह्रीं) है, वह सब मनोरथोंको पूर्ण करनेवाला है। इस एकाक्षर ब्रह्मका ऐसे यति ध्यान करते हैं, जिनका चित्त शुद्ध है, जो निरतिशयानन्दपूर्ण हैं और जो ज्ञानके सागर हैं। (यह मन्त्र देवीप्रणव माना जाता है। ॐकारके समान ही यह प्रणव भी व्यापक अर्थसे भरा है। संक्षेपमें इसका अर्थ इच्छा-ज्ञान-क्रियाधार, अद्वैत, अखण्ड, सच्चिदानन्द समरसीभूत शिव-शक्ति-स्फुरण है।) वाणी (ऐं), माया (ह्रीं), ब्रह्मसू—काम (क्लीं), इसके आगे वक्त्र अर्थात् आकारसे युक्त छठा व्यञ्जन (चा), 'अवाम श्रोत्र'—दक्षिण कर्ण (उ) और बिन्दु अर्थात् अनुस्वारसे युक्त सूर्य (मुं), नारायण अर्थात् 'आ' से युक्त टकारसे तीसरा वर्ण (डा), अधर अर्थात् 'ऐ' से युक्त वायु (यै) और 'विच्चे'—यह नवार्णमन्त्र उपासकोंको आनन्द और ब्रह्मसायुज्य देनेवाला है। (इस मन्त्रका अर्थ—हे चित्स्वरूपिणी महासरस्वती! हे सद्रूपिणी महालक्ष्मी! हे आनन्दरूपिणी महाकाली! ब्रह्मविद्या पानेके लिये हम सब समय तुम्हारा ध्यान करते हैं। हे महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीस्वरूपिणी चण्डिके! तुम्हें नमस्कार है। अविद्यारूप रज्जुकी दृढ़ ग्रन्थिको खोलकर मुझे मुक्त करो।) जो हृदयरूप कमलके मध्यमें रहती हैं, प्रातःकालीन सूर्यके समान जिनकी प्रभा है, जो पाश और अङ्कुश धारण किये रहती हैं, जिनका मनोहर रूप है, जिनके हाथ वरद और अभय मुद्राओंसे युक्त हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो लाल वस्त्र पहने रहती हैं और भक्तोंके मनोरथ पूर्ण करती हैं, उन देवीको मैं भजता हूँ। महाभयका नाश करनेवाली, महासङ्कटको शान्त करनेवाली और महान्

करुणाकी साक्षात् मूर्ति तुम महादेवीको मैं नमस्कार करता हूँ। जिनका स्वरूप ब्रह्मादिक भी नहीं जानते—इसलिये जिन्हें अज्ञेया कहते हैं, जिनका अन्त नहीं मिलता—इसलिये जिन्हें अनन्ता कहते हैं, जिनका स्वरूप देख नहीं पड़ता—इसलिये जिन्हें अलक्ष्या कहते हैं, जिनका जन्म समझमें नहीं आता—इसलिये जिन्हें अजा कहते हैं, जो अकेली ही सर्वत्र हैं—इसलिये जिन्हें एका कहते हैं, जो अकेली ही विश्वरूपमें सजी हुई हैं—इसलिये जिन्हें नैका कहते हैं, वे इसीलिये अज्ञेया, अनन्ता, अजा, एका और नैका कहाती हैं। सब मन्त्रोंमें 'मातृका'—मूलाक्षररूपसे रहनेवाली, शब्दोंमें अर्थरूपसे रहनेवाली, ज्ञानोंमें 'चिन्मयातीता', शून्योंमें 'शून्यसाक्षिणी' तथा जिनसे और कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है, वे दुर्गा नामसे प्रसिद्ध हैं। उन दुर्विज्ञेया, दुराचारनाशिनी और संसारसागरसे तारनेवाली दुर्गादेवीको संसारसे डरा हुआ मैं नमस्कार करता हूँ॥ १७—२५॥

इस अथर्वशीर्षका जो अध्ययन करता है, उसे पाँचों अथर्वशीर्षोंके जपका फल प्राप्त होता है। इस अथर्वशीर्षको न जानकर जो प्रतिमास्थापन करता है, वह सैकड़ों लाख जप करके भी अर्चासिद्धि नहीं प्राप्त करता। अष्टोत्तरशत (१०८ बार) जप (इत्यादि) इसकी पुरश्चरणविधि है। जो इसका दस बार पाठ करता है, वह उसी क्षण पापोंसे मुक्त हो जाता है और महादेवीके प्रसादसे बड़े दुस्तर संकटोंको पार कर जाता है। इसका सायंकालमें अध्ययन करनेवाला दिनमें किये हुए पापोंका नाश करता है, प्रातःकालमें अध्ययन करनेवाला रात्रिमें किये हुए पापोंका नाश करता है, दोनों समय अध्ययन करनेवाला पहलेका पापी भी निष्पाप होता है। मध्यरात्रिमें तुरीय* संध्याके समय जप करनेसे वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। नयी प्रतिमापर जप करनेसे देवताका सान्निध्य प्राप्त होता है। भौमाश्विनी (अमृतसिद्धि)-योगमें महादेवीकी सन्निधिमें जप करनेसे महामृत्युसे तर जाता है। जो इस प्रकार जानता है, वह महा-मृत्युसे तर जाता है। इस प्रकार यह अविद्यानाशिनी ब्रह्मविद्या है॥ २६॥

॥ अथर्ववेदीय देव्युपनिषद् समाप्त॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

सब ब्रह्म है

सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत। अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथाक्रतुरस्मिँल्लोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति स क्रतुं कुर्वीत। (छान्दोग्य ३। १४। १)

यह सब ब्रह्म ही है। ब्रह्मसे ही जगत् उत्पन्न होता है, ब्रह्ममें ही विलीन होता है और ब्रह्ममें ही चेष्टा करता है। शान्त (संयत) होकर ब्रह्मकी उपासना करनी चाहिये। पुरुष कर्ममय है। इस लोकमें जैसा कुछ कर्म करता है, मरनेके बाद परलोकमें वह वैसा ही होता है। इसलिये सत्कर्मका अनुष्ठान करना चाहिये।

* श्रीविद्याके उपासकोंके लिये चार सन्ध्याएँ आवश्यक हैं। इनमें तुरीय-सन्ध्या मध्यरात्रिमें होती है।